अनुभूति

(गोवा विश्वविद्यालय के स्नातक प्रथम वर्ष,
हिन्दी मुख्य पाठ्यक्रम के लिए निर्धारित पुस्तक)

सम्पादक मंडल

डॉ. रवीन्द्रनाथ मिश्र

(अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, गोवा विश्वविद्यालय)

डॉ. ब्रिजपाल सिंह गहलोत
(शासकीय महाविद्यालय, केपें)

प्रा. मैग्डालीन डिसूजा
(सेंट जेवियर्स कॉलेज, म्हापसा)

डॉ. सोनिया सिरसाट
(शासकीय महाविद्यालय, सांखळी)

डॉ. वैशाली नाईक
(धेंपे महाविद्यालय, मिरामार)

वाणी प्रकाशन

वाणी प्रकाशन
4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली 110 002

शाखा
अशोक राजपथ, पटना 800 004

फ़ोन : +91 11 23273167 फ़ैक्स : +91 11 23275710

www.vaniprakashan.in
vaniprakashan@gmail.com

ANUBHOOTI
edited by Dr. Ravindranath Mishra

ISBN : 978-93-5229-041-3

© 2015 प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण

मूल्य : ₹ 65

इस पुस्तक के किसी भी अंश को किसी भी माध्यम में प्रयोग करने के लिए प्रकाशक से लिखित अनुमति लेना अनिवार्य है।

हर्ष प्रिंटर्स, दिल्ली-110 093 में मुद्रित

वाणी प्रकाशन का लोगो मक़बूल फ़िदा हुसेन की कूची से

पुरोवाक्

जीवन और जगत की परिवर्तित अनुभूति ही कलात्मकता के साथ साहित्य का रूप लेती है। भक्तिकाल की अनुभूति का स्वरुप आध्यात्मिक चेतना से अनुप्राणित था। उस समय संतों ने अपने प्रभु की कृपा से स्वानुभूति, अभिव्यक्ति एवं आचरण में पूर्ण सामंजस्य के द्वारा आंतरिक शुचिता पर बल देते हुए बेहतर इंसान एवं समाज की संकल्पना की। संतों के अगुआ निर्गुण काव्यधारा के प्रवर्तक कबीर ने सदियों से चली आ रही विभिन्न धर्मों की आध्यात्मिक परंपराओं के मिश्रण से स्वानुभूति का ऐसा घोल तैयार किया कि वह ततकालीन समाज के लिए ही नहीं अपितु वर्तमान समाज के लिए संजीवनी बूटी साबित हो रही। कबीर ने शरीर रूपी मंदिर में प्रभु को स्थापित कर व्यष्टि के माध्यम से समष्टि को ठीक करने का प्रयास किया। आज जहां उपभोक्ता एवं बाजावादी समाज स्वारथ को सब कोउ सगा मानकर अर्थ संग्रह में लगा हुआ है वहां कबीर निःस्वार्थभाव का पाठ पढ़ाकर वाणी की मधुरता, मन की पवित्रता और जीवन की सहजता पर बल देते हैं।

कबीर बादल प्रेम का, हम परति बरस्या आइ।
अंतरि भीगी आत्मा, हरी भई बन राइ॥

सगुण राम काव्यधारा को जन-जन तक लोकप्रिय बनाने वाले गोस्वामी तुलसीदास की विनय पत्रिका का हिन्दी साहित्य में विशिष्ट स्थान है। इसमें तुलसी ने अपना दैन्य, सेवक, शरणागत, प्रपत्ति एवं अनन्य भाव उड़ेल दिया है। उनके सच्चे अनन्य भाव के अंतर्गत सभी अन्य प्रकार के संबंध रस्सी की तरह बट कर दृढ़ हुए हैं। तुलसी की अनन्यता में एकांगिता नहीं अपितु सर्वांगीणता है। वे अपने राम के माध्यम से व्यक्ति और समाज को आदर्श, नैतिक, उदार एवं मानवतावादी रुप देना चाहते थे। तुलसीदास की कृतियों में उनके भक्त, कवि एवं सुधारक वाले रुप यथा स्थान विद्यमान हैं। विनयपत्रिका में उनका 'रामहि केवल प्रेम पियारा, जानि लेइ जो जाननि हारा' भक्ति वाला रुप सर्वत्र दृष्टिगोचर हुआ है।

तुलसी प्रभु राम की कृपा से सम्पूर्ण मानवीय विकारों को दूर कर सदगुणों को अपनाने पर बल देते हैं। आज हमारे जीवन से यथालाभ संतोष, परहित, मनसा,

वाचा, कर्मणा की एकरुपता, वाणी की मधुरता आदि विचारों और भावों का लोप हो गया है। उनका मानना था कि इन सद्गुणों को हम प्रभु राम की आराधना और कृपा के द्वारा की अपना सकते हैं। तुलसी ने अपने समय और समाज में व्याप्त तमाम विसंगतियों के संदर्भ में राम को मर्यादा पुरुषोत्तम और उदारवादी चेत्ता के रुप में खड़ा कर मानवता का संदेश दिया। तुलसी ने जीवन और जगत में व्याप्त भेदभाव और विरोधों में समन्वय स्थापित किया।

मुगलकालीन शासन व्यवस्था में थोड़ी स्थिरता आने के पश्चात दरबारी संस्कृति का विकास हुआ। सम्पन्नता में भव्यता की संस्कृति पनपती है। जिसके अंतर्गत कला, प्रेम और श्रृंगार के विविध रुप दिखाई देने लगते हैं। रीतिकाल में जहां रीतिबद्ध और रीतिसिद्ध कवियों ने साहित्य के कलात्मक, भक्तिजन्य श्रृंगारिक और विशुद्ध मांसल सौन्दर्य का प्रकृति के विभिन्न उपादानों के माध्यम से चित्रण किया वहीं रीतिमुक्त काव्यधारा के कवियों में प्रमुख रुप से घनानंद ने स्वानुभूति प्रेम की कसक को प्राकृतिक उपादानों के द्वारा बड़ी ही निश्छलता, सरलता और सहजता से व्यक्त किया है। कवि प्रेम की कचोट को इतनी मार्मिकता से व्यक्त करता है कि पाठक का मान पुलकित हो उठता है। नायिका के विभिन्न अंगों के सौन्दर्य के वर्णन से लगता है कि उसका सौंदर्य शहद की भांति अभी टपक पड़ेगा अभी टपक पड़ेगा। भक्तिकालीन प्रभावों के चलते घनानंद ने प्रेम की संयोगात्मक और वियोगात्मक अनुभूति को कृष्ण और गोपिकाओं पर आरोपण के द्वारा व्यक्त किया है। घनानंद के प्रेम में सर्वस्व त्याग एवं समर्पण का भाव है। आज के उपभोक्ता और बाजारवादी दुनिया में घनानंद का प्रेम खोजने पर भी नहीं मिलेगा। इनके लिए तो प्रेम

अति सूधो सनेह को मागर है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।
तहाँ साँचे चलें तजि आपनपौ झझकैं कपटी जे निसाक नहीं॥

आधुनिक हिन्दी रचनाकारों में भारतेंदु हरिश्चंद्र के बाद जीवन, जगत और लोक की अनुभूतियों की व्यापकता और गहनता महाकवि निराला की रचनाओं में दृष्टिगोचर होती है। छायावादी कवि के अतिरिक्त आपकी पहचान प्रगति और प्रयोग रचनाकार के रुप में बनी। जीवन की मुक्तता को रचना में अपनाते हुए आपने कई परंपराओं रुढ़ियों को तोड़ा। कबीर की भाँति निराला मनुष्य के अंतर मन को साफ करना चाहते थे। वे अंदर और बाहर के अंधकार को दूर कर स्वच्छता और प्रकाश लाना चाहते थे। "काट अन्ध-उर के बन्धन-स्तर' के साथ-साथ "गहन है यह अन्ध कारा; स्वार्थ के अवगुण्ठनों से, हुआ है लुण्ठन हमारा।" के माध्यम से निराला व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के अन्धकार को दूर करना चाहते थे। वे तत्कालीन शोषण व्यवस्था, स्वार्थपरता, अवसरवादिता, पराधीनता, अमानवीयता आदि से बहुत दुःखी थे। आज पराधीनता को छोड़कर सारे मुद्दे जीवंत हैं। निराला का महान व्यक्तित्व एवं सर्जन

कालान्तर में अन्य रचनाकारों के लिए प्रेरणास्रोत बना।

माखनलाल चतुर्वेदी छायावादोत्तर राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक काव्यधारा के महत्वपूर्ण कवि थे। इन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के स्वर को मुखरित किया। आपकी 'पुष्प की अभिलाषा' कविता की पंक्तियाँ 'मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ पर तुम देना फेंक। मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ जाएँ वीर अनेक' लोगों की जुबान पर गायी जाने लगी। विवेच्य कविता 'अमर निशानी' और 'जवानी' कविता अमर शहीदों के बलिदान और त्याग की जीवंतता को प्रकट करती है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में मुक्तिबोध एक विलक्षण प्रतिभा के धनी रचनाकार हैं। जीवन के प्रारम्भिक दौर में वे डॉ. नारायण विष्णु जोशी के गाँधीवादी आदर्शों से प्रभावित होते हुए शीघ्र भौतिकवाद एवं मार्क्सवाद की ओर अग्रसर हुए। नेमिचंद्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, प्रकाशचंद्र गुप्त के विचारों से प्रभावित मुक्तिबोध के प्रिय लेखक बाल्जाक, फ्लॅबियर, दॉस्तॉयवस्की, गोर्की थे। जिनमें वे गोर्की से अधिक प्रभावित थे। मुक्तिबोध आजीवन समाज के हाशिए पर रहने वाले लोगों के लिए लड़ाई लड़ी। उन्होंने अपने जीवन में गरीबी और संघर्ष को बड़े करीब से देखा था। वे जीवन, समाज और देश पर छाये हुये अन्धकार को दूर करना चाहते थे। जीवन मूल्यों के प्रति समर्पित कवि समाज और देश के हित के लिए अपनी तरह संकल्प-धर्मा चेतना का रक्तप्लावित स्वर की तलाश करता रहा। मुक्तिबोध व्यक्तिवादी खेमे से असंतुष्ट होकर समष्टि के हित के पक्षधर थे। फैंटेशी अभिव्यक्ति का माध्यम होने के कारण मुक्तिबोध की रचना से आमजनता तक नहीं पहुँच सकी जबकि वह उन्हीं को केंद्र में रखकर लिखी गयी थी।

धूमिल को समकालीन कविता का विद्रोही कवि कहा जाता है। कवि का मानना है कि जब तक सड़क का आदमी संसद तक नहीं पहुँचेगा तब तक सत्ता व्यवस्था में परिवर्तन नहीं होगा। कवि सत्ता व्यवस्था, लोकतंत्र, संसद आदि के प्रति खीझ व्यक्त करता है। परतंत्रता के दौरान जिस स्वराज्य की कल्पना की गयी थी वह कहीं नजर नहीं आ रही थी। समाज का सत्ताधरी एवं बुद्धिजीवी वर्ग अपने-अपने हितों को साधने में लगे थे। आम जनता उनके शोषण का शिकार थी। आजादी के बीस वर्ष होने पर धूमिल कहते हैं कि–

"क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है
या इसका कोई खास मतलब होता है?"

आजादी का अर्थ ही गायब हो गया था क्योंकि यह चंद लोगों के विलास का साधन बन गयी थी। जिसकी चर्चा आज भी की जा रही है कि आखिरकार विकास की

किरण इतने वर्षों तक सूदूर गाँवों तक क्यों नहीं पहुँची। धूमिल का मानना था कि विकास के लिए गांव और शहर की दूरी को कम करना पड़ेगा। इसके लिए उचित कार्रवाई करनी पड़ेगी। जनता को आए दिन अकाल की स्थितियों से गुजरना पड़ता है। धूमिल का मंतव्य है कि इसके लिए कविता को भी अहम भूमिका निभानी पड़ेगी। वस्तुस्थिति तो यह है कि आज सूचना तकनीक और मीडिया के विस्फोट के कारण साहित्य हाशिए पर चला गया है। धूमिल हिन्दी साहित्य में अपनी बेबाकी जबान के लिए जाने जाते हैं। लोक संस्कार के कारण उनकी अनुभूति और अभिव्यक्ति में गवई पन नजर आता है।

बीसवीं सदी के अस्सी के दशक में 'अपना क्या है इस जीवन मैं/ सब तो लिया उधार/ सारा लोहा उन लोगों को / अपनी केवल धार' की पंक्तियों के साथ अरुण कमल का आगमन हिन्दी कविता में हुआ। बिहार की साहित्यिक उपजाऊ जमीन से जुड़े अरुण कमल मूलतः अंग्रेजी के प्राध्यापक हैं। काव्य लेखन के क्षेत्र में इन्होंने बहुत अल्प समय में ही अपनी नयी जगह बना ली। अरुण कमल की रचनाओं में अपने देश, समाज और गाँव की मिट्टी के प्रति प्रतिबद्धता है। हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका का 'आलोचना' का संपादन भी अरुण कमल ने कई वर्षों तक किया है।

बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में लीलाधर मंडलोई हिन्दी कविता में अपनी अलग पहचान बनाते हैं। कवि मध्य प्रदेश के आदिवासी जीवन की दशा-अवदशा का चित्रण करता है। भूमंडलीकरण और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण आज जिस प्रकार आदिवासी जनजातियों का जीवन विस्थापित हो रहा है। इनके कारण जल, जंगल और जमीन का किस प्रकार दोहन हो रहा है। इस समस्या को मंडलोई ने अपनी कविताओं में यथार्थ रुप से चित्रित किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अन्य समसामयिक विषयों पर भी कविताएँ लिखी हैं। सम्प्रति आप 'नया ज्ञानोदय' के संपादक के रुप में कार्य कर रहे हैं।

अंतिम दशक की महिला रचनाकारों में अनामिका का विशिष्ट स्थान है। मुजफ्फरपुर, बिहार में 1961 में जन्मी अनामिका ने मध्यवर्गीय नारी की जिन्दगी के संघर्ष एवं उसकी कशमकश को बहुत करीब से जीया है। वे अपनी रचनाओं में नारी जीवन की त्रासदी का बड़ा मार्मिक चित्रण करती हैं। उनका मानना है कि– "ऋतुमती होना, गर्भधारण करना, दूध पिलाना, बच्चे बड़े करना, पिटना, बलात्कार, गालियाँ, टूँ-टाँ, खचर-पचर, भावहीन यांत्रिक संभोग, नोच-खसोट... तरह-तरह की हिकारतें चुपचाप झेलते चले जाना स्त्री-देह से जुड़े ऐसे बड़े सत्य हैं जिनकी अभिव्यक्ति की भाषा अब जाकर स्त्रियों ने साधी है।" इस कथन से अनामिका की नारी सोच का चित्र खड़ा हो जाता है। बालिका से लेक वृद्धा नारी की विभिन्न संवेदनाओं को कवयित्री ने अपनी रचनाओं में उभारा है। आज वृद्ध माता-पिता के अभाव में परिवार का समीकरण किस प्रकार बिगड़ रहा है, हम सब इससे भलीभाँति

परिचित हैं। ये हमारी सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान हैं। इनके द्वारा संतानों में प्रेम, सदाचरण और मानवीयता के गुण विकसित होते हैं लेकिन आज की युवा पीढ़ी इन सब बातों को बकवास मानती है।

बीसवीं सदी के अवसान पर जब परिवेशगत जीवन में उथल-पुथल हो रही थी तो उस समय बोधिसत्व अपनी लोकरंगत के साथ हिन्दी कविता की जमीन पर उतरते हैं। लोक की मिट्टी की गंध से इनकी कविता सुगंधित हो उठती है। विश्व प्रसिद्ध कालीन के कारोबार से जुड़े भदोही जनपद, उ.प्र. में 1968 में जन्मे युवा कवि अखिलेश मिश्र कालान्तर में 'बोधिसत्व' हो गए। आपकी रचनाओं में ग्राम्य जीवन के विविध प्रसंग एवं प्रकृति के नाना रूप दृष्टिगोचर होते हैं। जंगल के पेड़-पौधे अपना घर-संसार उजाड़ कर एक-एक कर मानव-हित में लग जाते हैं। उनके द्वारा हम घर बनाते हैं, उन्हें जलाते हैं, सीमेंट, बालू, मशीनों को सहारा देने और ईंटों को पकाने आदि न जाने कितने कार्यों में प्रयोग में लाते हैं। प्रकृति अपना सर्वस्व दान कर हमारा पालन-पोषण करती आ रही है और हम प्रतिदान स्वरूप उसे नष्ट करने में लगे हैं। यही कारण है कि पर्यावरण संबंधी नाना प्रकार के संकट एवं आपदाएँ विकराल रुप धारण कर रही हैं।

हिन्दी कविता का इतिहास बहुत पुराना है लेकिन गद्य का आर्विभाव प्रमुख रूप से भारतेंदु काल से माना जाता है। हिन्दी कहानी को लेकर आलोचकों के विभिन्न मत हैं। मुंशी प्रेमचंद के पहले के कहानीकारों में बंग महिला का महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी 'दुलाईवाली' कहानी हिन्दी की प्रारम्भिक मौलिक कहानियों में से एक है। प्रस्तुत कहानी का ताना-बाना वंशीधर के माध्यम से इलाहाबाद, कलकत्ता और वाराणसी को संबंधों की डोर से बांध कर बुना गया है। इसमें आंचलिक संस्कृति, पात्रानुकूल भाषा, लोगों की मानसिकता और मानवीय मूल्यों की सफल अभिव्यक्ति हुई है।

हिन्दी कथा साहित्य के प्रेमचंद सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में ही नहीं अपितु भारतीय जनमानस के कथाकार हैं। कथा को जमीनी रंगत प्रदान कर समसामयिक आन्दोलनों से जोड़कर कलात्मक अभिव्यक्ति देने में इन्हें महारत हासिल है। प्रेमचंद की कहानियाँ अपने समय का बयान करती हुई गाँधी और मार्क्स से प्रभावित आदर्श से यथार्थ की ओर कदम रखती हैं। प्रेमचंद अपने युग की नब्ज पर ऊँगली रखते हुए समय के परिवर्तन की सूचना देते हैं। प्रेमचंद की कहानियाँ गाँव और शहर की संस्कृति और वहाँ की जिन्दगी के विभिन्न परतों को खोलती हुई हुई चलती है। 'प्रायश्चित' कहानी कार्यालय की संस्कृति का बयान करते हुए मदारीलाल और सुबोधचंद के रिश्तों के बीच मित्रता और कटुता के विभिन्न पायदानों पर आगे बढ़ती हुये मदारीलाल का हृदय परिवर्तन करा देती है। प्रेमचंद की प्रारम्भिक कहानियाँ नैतिकता, आदर्श, उपदेशात्मकता, हृदय परिवर्तन, मानवीयमूल्यों आदि से ओतप्रोत हैं।

प्रेमचंद के बाद हिन्दी साहित्य को यदि किसी साहित्यकार ने नयी जमीन प्रदान की तो उनमें बहुमुखी प्रतिभा के धनी अज्ञेय का नाम आदर से लिया जाता है। हिन्दी आलोचकों के तमाम आरोपों-प्रत्यारोपों के बीच उन्होंने अपनी सजर्नात्मकता से सबको मात किया और हिन्दी जगत में नई लकीर खींचने में कामयाब रहे। 'खितिन बाबू' कहानी में अज्ञेय ने अपंगता की समस्या को आत्मशक्ति के बल पर निदान करने की कोशिश की है। अज्ञेय की रचनाएं कथ्य और शिल्प की ताजगी के लिए जानी जाती हैं।

हिन्दी साहित्य में जब नई कविता और नई कहानी पाँव पसार रही थी तो उसी समय 1954 में फणीश्वरनाथ 'रेणु' का मैला आँचल आया। रेणुजी मूलतः घर-गृहस्थी, खेत-खलिहान, ग्रामीण अंचल के रचनाकार हैं। इसके साथ ही रेणु ने प्रेमचंद की भाँति गाँव और शहर की सोच और जीवन के विविध रूपों को सामाजिक एवं राजनैतिक परिदृश्य के संदर्भ में विवेचित किया है। यहां 'ठेस' कहानी का एक उदाहण दृष्टव्य है– "मोथी घास औश्र पटेर की रंगीन शीतलपाटी, बाँस की तीलियों की झिलमिलाती चिक, सतरंगे डोर के मोढ़े, भूसी-चुन्नी रखने के लिए मूँज की रस्सी के बड़े-बड़े जाले, हलवाहों के लिए ताल के सूखे पत्तों की छतरी-टोपी तथा तरह के बहुत-से काम हैं, जिन्हें सिरचन के सिवा गाँव में और कोई नहीं जानता।" फणीश्वरनाथ 'रेणु' रचना में अपनी लोकरंगत के लिए जाने जाते हैं।

नई कहानी आन्दोलन के पुरोधा राजेन्द्र यादव ने अपने लेखन और पत्रकारिता से हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया। आपने मध्यवर्गीय चेतना, दलित-स्त्री-विमर्श, प्रगतिशील रुझान, मार्क्सवादी एवं मनोविश्लेषणवादी चिंतक के रूप में अलग पहचान बनायी। राजेन्द्र यादव की कहानियों में लोकजीवन की कहानियों की किस्सागोई, कौतुहलता एवं रोचकता के गुण विद्यमान हैं। राजेन्द्र यादव ने अपनी कहानियों के पात्रों का ऐसा मनोविश्लेषणात्मक चित्रण किया है कि उससे उसकी पठनीयता और बढ़ जाती है। आज से पन्द्रह-बीस साल पहले मध्यवर्गीय परिवारों और घोर आर्थिक संकटों से गुजरना पड़ता था। रोजमर्रा की जिन्दगी में प्रयुक्त छोटे-छोटे सामानों को जुटाने एवं थोड़े-से सुखों को पाने के लिए उन्हें घोर मशक्कत करनी पड़ती थी। 'दायरा' कहानी में विभा और हरी दम्पति भी थोड़े से सुखों की तलाश में चित फंड का सहारा लेते है। इस कार्य में उनके सामने कई संकट आते हैं। पूँजीवादी व्यवस्था में धन संचय एवं स्वयं के सुख के साधनों को जुटाने की प्रवृत्ति इतनी बढ़ गई है कि आज का मनुष्य उसके लिए आत्मकेन्द्रित होता जा रहा है।

रामदरश मिश्र की हिन्दी साहित्य यात्रा की पदचाप धीरे-धीरे शुरू हुई और आज वह वट वृक्ष का रूप धारण कर चुकी है। मिश्रजी ने हिन्दी साहित्य की लगभग सभी विधाओं को अपनी लेखनी से समृद्ध किया। वे स्वाभावतः मृदुभाषी, मिलनसार, सहज एवं सरल इंसान हैं। आपका साहित्य लेखन मूलतः पूर्वी उत्तर प्रदेश के ग्राम्याँचल

की परिवेशगत संस्कृति से जुड़ा है। यहाँ की सम्पूर्ण प्रकृति और जीवन के विविध सन्दर्भो को मिश्रजी ने बड़ी संजीदगी के साथ अभिव्यक्त किया है। जिसमें भारतीयता, मानवीयता और मूल्यता का अजस्र स्रोत प्रवहमान है। रामदरश मिश्र कविता और कहानी के विभिन्न आंदोलनों से जुड़े रहकर भी अपनी एक अलग पहचान बनाई। लेखक ने विवेच्य कहानी में बदलते हुए गाँव का चित्रण किया है। अब गाँव की औरतें घर के बाहर नहीं निकलतीं थीं। विधवा औरतों के लिए तो और भी समाज में जीवन जीना दूभर था। उनका जीवन 'नाज री घुमा' की तरह घर की चहारदीवारी तक सीमित था लेकिन आज स्थितियाँ बदली हैं। अब वे अपने कर्तव्यों और जिम्मेदारियों का निर्वाह कुशलतापूर्वक कर रही हैं। रामदरश मिश्र ने अपने लेखन के लगभग पचास वर्षों में परिवर्तित समाज और उसकी मानसिकता को बराबर रेखांकित किया है।

महिला कथाकारों में मैत्रेयी पुष्पा ने नारी जीवन के संघर्ष, लोक संस्कृति एवं शहरी परिवेश, सामाजिक एवं राजनीतिक हलचल, नारी शिक्षा व्यवस्था एवं पुरुष की लोलुप काम वृत्ति, नारी की विविध मानसिक वृत्ति आदि को बेजोड़ चित्रण किया है। आपने अपने कथा साहित्य में मूलतः झांसी एवं बुंदेलखंड के भूभाग की संस्कृति को जीवंत किया है। यदि आपके कथा साहित्य को नारी जीवन का दस्तावेज कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। 'बेटी' कहानी में आपने शिक्षित और अशिक्षित वसुधा और मुन्नी के माध्यम से बेटी के प्रति समाज की मानसिकता का बड़ा व्यावहारिक चित्रण किया है। आज भी मैत्रेयी पुष्पा अपने लेखन से हिन्दी साहित्य को समृद्ध ही नहीं कर रही हैं अपितु नारी जीवन का स्वस्थ मार्ग प्रशस्त कर रही हैं।

समकालीन साहित्यकारों में उदय प्रकाश ने हिन्दी कहानी को एक नई जमीन दी। मध्यप्रदेश के आदिवासी इलाके से चलकर इन्होंने हिन्दी कथा साहित्य को बाजारवाद, उपभोक्तावाद, भूमंडलीकरण आदि समसामयिक सन्दर्भों से जोड़कर कहानी को एक नया आयाम दिया। लेखक 'आचार्य की रजाई' कहानी के माध्यम से आचार्यों की घृणित मानसिकता को रेखांकित करता है। भारतीय संस्कृति में गुरु और शिष्य के रिश्ते को पवित्र माना गया है, जहाँ पर त्याग और समर्पण का भाव होता है। लेखक ने आज की शिक्षा व्यवस्था और विश्वविद्यालयों में चल रहे व्यावसायिक प्रवृत्ति के शोधकार्य पर करारा व्यंग्य किया है।

उत्तराधुनिकता के दौर में स्त्री-दलित विमर्श ने लगभग सम्पूर्ण भारतीय साहित्य को झकझोर कर रख दिया। दलित चेतना के पुरोधा डॉ. भीमराव अम्बेडकर थे, जिनसे प्रेरणा लेकर दलित साहित्य एक आन्दोलन के रूप में सम्पूर्ण देश में फैल गया। इसकी शुरुआत महाराष्ट्र की भूमि से हुई। नामदेव ढसाल, दया पवार, मलिका

अमर शेख, शरण कुमार लिंबाले, लक्षमण गायकवाड़, माधवी देसाई आदि ने मराठी दलित साहित्य को पहचान दी। इसी दौरान ओमप्रकाश वाल्मीकि, तुलसीराम, जयप्रकाश कर्दम, श्यौराजसिंह बेचैन, मोहनदास नैमिशराय आदि हिन्दी दलित लेखकों ने दलित-विमर्श को आन्दोलित किया। कालान्तर में राजनीतिक समर्थन मिलने से यह आन्दोलन समग्र देश में फैल गया। इससे समाज के हाशिए पर उपेक्षित एवं तिरस्कृत जीवन बिताने वाले दलितों में एक नई चेतना जाग्रत हुई। अब वे धीरे-धीरे समाज की मुख्यधारा से जुड़ रहे हैं। मोहनदास नैमिशराय की 'आवाजें' कहानी उसी चेतना की एक आवाज है लेकिन यहाँ विद्रोह की आवाज तो उठती है लेकिन स्वयं की बुरी लतों और आर्थिक अभाव के कारण दम तोड़ देती है।

महिला युवा हिन्दी कथाकार जयश्री रॉय ने इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में चुपके से अपनी लेखनी की धमक से हिन्दी जगत को चौंका दिया। आपके लेखन में जहाँ बिहार के लोक जीवन के विविध रंगों की खुशबू मौजूद है वहीं पर गोवा की लोक संस्कृति, पर्यावरण समस्या, वर्तमान परिवेशगत परिस्थितियों आदि का भी जीवंत उल्लेख हुआ है। लेखिका ने नारी मन के विभिन्न परतों को उकेरते हुए स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का भी बड़ी बेबाकी से चित्रण किया है। जयश्री की कहानियाँ भाव, विचार और भाषा के धरातल पर तराशी हुई लगती हैं और मानवीय संवेदना को झकझोर कर रख देती हैं। विवेच्य कहानी 'आस्था' भौतिकवादी दुनिया में आध्यात्मिकता से जुड़कर नैतिकता को मजबूत करती है।

आज उपभोक्तावाद एवं बाजार का युग है। जिसमें इंसान से अधिक वस्तु का महत्व है। हम बाजार की ऐसी माया नगरी में प्रवेश कर चुके हैं जहाँ पर कुछ न कुछ खरीदने के लिये विवश हैं। घर का महत्व कीमती सामानों से है न कि आदमी की आदमियत से है। समकालीन कथाकारों में कैलाश बनवासी से वर्तमान समय की धड़कन को बड़ी संजीदगी से महसूस किया। लेखक कहानी 'बाजार में रामधन' ही नहीं अपितु हम सभी लोग खड़े हैं। यहाँ खड़े होकर हम अतीत की परंपरागत और वर्तमान संस्कृति के बीच त्रिशंकु की भाँति लटके हैं। आज नई और पुरानी पीढ़ी के बीच होरी और गोबर के बीच वाला वैचारिक द्वंन्द्व नहीं है अपितु मूल्यों और संस्कृति का द्वन्द्व है।

प्रस्तुत पुस्तक के संपादन सहयोग के लिए मैं डॉ. ब्रिजपाल सिंह गहलोत, श्रीमती मॅक्डालिन डिसूजा, डॉ. सोनिया सिरसाट और डॉ. वैशाली नाईक के प्रति अंतःकरण से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। गोवा विश्वविद्यालय से संलग्न सभी हिन्दी प्राध्यापकों एवं प्राध्यापिकाओं के वैचारिक एवं मनोगत सदभाव के लिए भी मैं उनहें श्रद्धाभाव के दो शब्द अर्पित करता हूँ। पुस्तक संपादन की प्रक्रिया की पूर्णता

प्रकाशन के बाद ही पूर्ण होती है। इस पूर्णता के दुर्गम एवं जटिल मार्ग को प्रशस्त कराने की महती भूमिका का निर्वाह ख्यातनाम साहित्य प्रेमी और वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली के सुप्रसिद्ध प्रकाश श्री अरुण माहेश्वरी ने की। मैं श्री माहेश्वरी के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गोवा विश्वविद्यालय,
गोवा-403206